<u>मध्यस्थ दर्शन - एक परिचय</u> | मूल प्रणेता एवं लेखक, श्री ए नागराज, अमरकंटक
<u>इस लेख का उद्देश्य:</u> Paper submission for conference.

<u>परिचय</u>
आज तक सर्व मानव ने शुभ चाहा है| शुभ घटित हुआ नहीं| इसका कारण मानव का 'जीव चेतना' में जीना रहा है| जीवों से अच्छा जीने के प्रयास में, मानव ने आहार, आवास, अलंकार, दूरश्रवण, दूर्गमन दूरदर्शन संबंधी विकास को प्राप्त कर लिया| नकारात्मक पक्ष में, अपराध को वैध मान लिया एवं सभी मानव (ज्ञानी, विज्ञानी, अज्ञानी) अपराध में फँस गए है| इसका प्रमाण शिक्षा एवं समाज मानसिकता में अधिक भोग, काम, एवं लाभ का होना है| ऐसे उन्माद के लिए सुविधा-संग्रह विधि, और संघर्ष-युद्ध को मानव ने अपनाया, फलस्वरूप धरती बीमार हो चुकी है| आज मानव समस्त प्रकार के अपराध कृत्यों को करते हुए देखने को मिल रहा है, और इस धरती पर मानव के रहने पर प्रश्न चिन्ह लग चुका है|

इसके विकल्प में मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद प्रस्तावित है, जिससे अपराध मुक्ति , भ्रम मुक्ति , अपना-पराया का दीवाल से मुक्ति संभव है| इसके प्रणेता एवं लेखक श्री ए नागराजजी (अमरकंटक, म.प्र.) है| अस्तित्व, एवं उसमे मानव के प्रयोजन को लेकर तीव्र जिज्ञासा वश, उन्होंने २५ वर्ष साधना-समाधि-संयम विधि से अनुसंधान किया*, जिसके फलस्वरूप उन्हें पूरा अस्तित्व, उसमे मानव का प्रयोजन एवं विकसित चेतना रूप में मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना समझ में आया है| *(* समाधी: वैदिक विचार अनुसार ध्यान की अंतिम उपलब्धि जिसमे अज्ञात – ज्ञात होने की बात कही गयी है' | संयम: समाधि के पश्चात की प्रक्रिया, विधि | ** नागराजजी ने संयम को शास्त्रों में कहे हुए विधि से भिन्न, उसे 'पलटाकर' किया)*

अस्तित्व में सीधे सीधे अनुभव करने के फलस्वरूप, अस्तित्व स्वयं सहअस्तित्व है, इसमें व्यवस्था निहित है, सामंजस्य निहित है - यह समझ में आया| यह आपको सूचना है कि:

- सहअस्तित्व अध्ययनगम्य हो चुकी है| सम्पूर्ण अस्तित्व को "व्यापक सत्ता में संपृक्त जड़-चैतन्य प्रकृति" के रूप में समझा गया है, अनुभव किया गया है *(*व्यापक: जो सभी जगह एक सा फैला हुआ है, जिसे सामान्य भाषा में 'स्पेस', 'शून्य', 'आकाश' भी कहते है| संपृक्त: भीगा, घिरा, डूबा रहना | व्यापक वस्तु स्वयं 'सत्ता' है, साम्य उर्जा है, यह पारगामी है, पारदर्शी है| अत: आकाश, या शून्य क्रिया नहीं है, व्यापक है, इसीलिए वस्तु है)*
- मानव को चैतन्य इकाई एवं भौतिक-रासायनिक जड़ शरीर के संयुक्त रूप में समझा गया है| चैतन्य इकाई समझ में आ चुका है, जिसमे ५ बल, ५ शक्ती रूपी १० क्रियाएँ है, और इसका नाम 'जीवन' दिया गया है| चैतन्य के साथ 'चेतना' का स्वरूप समझ में आ चुका है
- अस्तित्व में मानव का प्रयोजन स्पष्ट हो चुका है, ज्ञात हो चूका है, एवं उसके होने, रहने की विधि स्पष्ट हो गया है| सार्वभौम मानवीय आचरण, सार्वभौम मानवीय मूल्य, सार्वभौम मानव धर्म और सार्वभौम मानव जाती समझ में आया है *:(धर्म = धारणा = जिसका जिससे विलगीकरण संभव नहीं हो, वही उसका धर्म है)*

इस धरती पर मानव के अलावा प्रकृति के शेष ३ अवस्थाएं: पदार्थ (मिटटी-पत्थर); प्राण (वनस्पति); एवं जीव एक दूसरे के लिए पूरक है, और मानव के लिए भी पूरक है| यह स्वयं में व्यवस्था है, और समग्र व्यवस्था में भागीदार है| मानव मात्र व्यवस्था में नहीं है, और एक दुसरे का एवं प्रकृति के शेष ३ अवस्थाओं का शोषण कर रहा है| इसका मूल कारण अज्ञान(भ्रम) ही है, जिसके फलस्वरूप मानव 'जीव चेतना' में ही जी रहा है जिसमें उसके 'विषय' – आहार, निद्रा, भय, एवं मैथुन है जिसके लिए शरीर के पाँचों इन्द्रियों का प्रयोग करता है | आजके हमारे अधिकाँश व्यक्तिगत एवं सामाजिक प्रयास इसी दिशा में है| ऐसे जीव चेतना में जीता हुआ मानव का स्वभाव: 'दीनता, हीनता क्रूरता' है, जो किसी को भी स्वीकार होता नहीं – न व्यक्ति को, न समाज को | अत: मानव पशुओं से अधिक विकसित तो हो चुका है, परन्तु, अभी भी 'मानव चेतना' में जी नहीं रहा है,

अर्थात जीने का मुख्य लक्ष्य पशुओं जैसा ही है, केवल उसे बढ़िया ढंग से कर रहा है| हर एक स्तर में हमारी समस्याओं का कारण मात्र इतना ही है| जबकि, अस्तित्व में अध्ययन, अनुभव प्रमाण विधि से हर मानव समझदार हो सकता है, जिससे समाधानित होता है, और सुखी होता है|
जिससे:

- हर व्यक्ति में बौद्धिक समाधान (से सुख)
- हर परिवार में बौद्धिक समाधान-भौतिक समृद्धि (से सुख-शांती)
- समाज में अखंडता - अभय, परस्पर विश्वास (से सुख-शांति-संतोष)
- व्यवस्था की सार्वभौमता - प्रकृति में संतुलन (से सुख-शांति-संतोष-आनंद)

ऐसे 'समाधान-समृधि-अभय-सहअस्तित्व' रूपी मानव लक्ष्य इस धरती पर स्थापित, प्रमाणित हो सकता है, यही अपराध मुक्त , भ्रम मुक्त मानव जात का पहचान है| इसे शिक्षा विधि में लाने का प्रयास भारत में प्रारंभ हो चुकी है| आज की संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्था पहले वर्णित अपराध कृत्यों के पक्ष में काम कर रहे है| ऐसे होते हुए शांति-सामंजस्यता के लिए हमारे समस्त प्रयास इसी कटघरे में रह जाते है| इसके विकल्प में विकसित चेतना विधि से मानवीय संस्कृति-सभ्यता-विधि-व्यवस्था प्रस्तावित है| शिक्षा में विकल्प, आचरण में विकल्प, संविधान में विकल्प एवं व्यवस्था में विकल्प प्रसतावित है, जिसमे शिक्षा, आचरण, संविधान, व्यवस्था में एक सूत्रता है|
मानव जाति की, मानव समाज की स्थिति किसी भी देश काल में मानव की मानसिकता, सोच-विचार, और समझ (या उसका अभाव) का ही प्रतिबिम्ब है| हर मानव सुख चाहता है, उसकी अपेक्षा रखता है| ऐसे सुखी होने का स्वरुप, एवं उसके लिए विधि, प्रत्येक मानव ने अपने ढंग से कुछ माना हुआ है | अत: समाज में "सामंजस्य" को समझने के लिए मानव की मानसिकता एवं उसके आधार को पहले समझना होगा, जिसके लिए मानव के चैतन्य पक्ष का अध्ययन आवश्यक है| "विश्व शांति एवं सामंजस्य" के आशय को सुनिश्चित करने "शांति" एवं "सामंजस्य" के स्वरुप को पहले समझना होगा| व्यक्ति के स्तर पर सामंजस्य होने से ही परस्पर मानव संबंधों में सामंजस्य संभव है (परिवार से समाज, राष्ट्र, अन्तर्राष्ट्र तक), एवं मानव-शेष प्रकृति के साथ संबंध समझने से ही प्रकृति के साथ संतुलन या सामंजस्य संभव है|

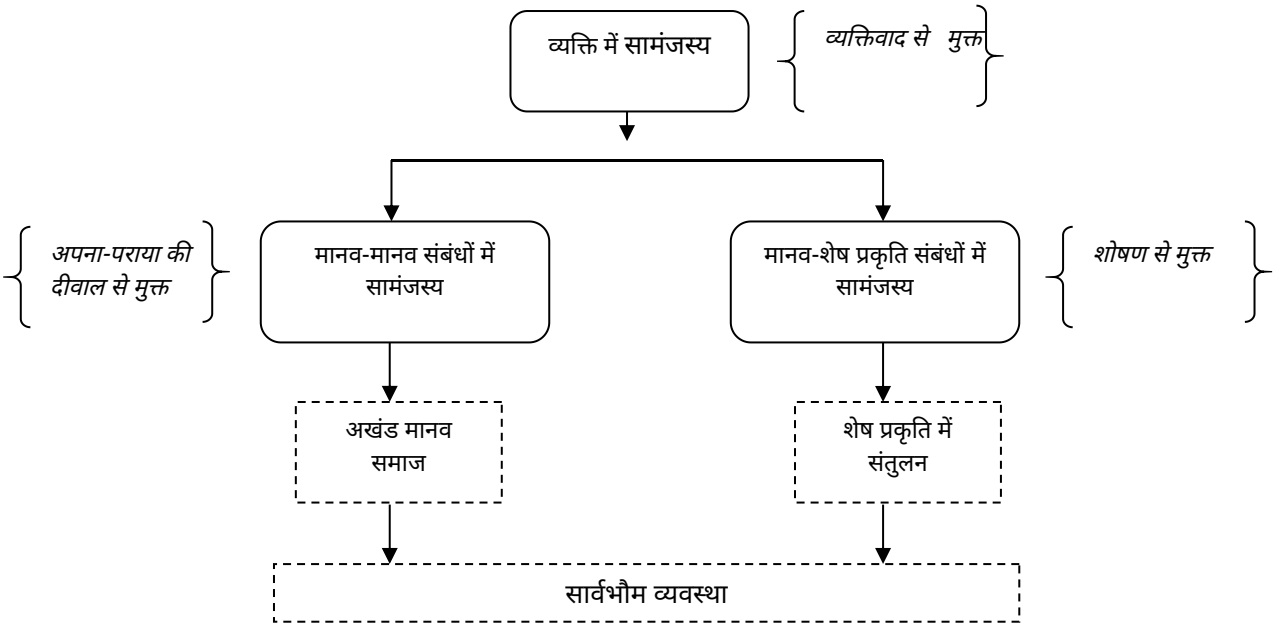

वर्तमान में मानव-मानव संबंधों में संघर्ष, एवं मानव-शेष प्रकृति संबंध में संघर्ष जीव-चेतना वश भ्रमित विचार-मानसिकता का फलन है| इसका उन्मूलन चेतना विकास से संभव है, जिसके लिए:

- सहअस्तित्व रूपी अस्तित्व की समझ: "अस्तित्व दर्शन ज्ञान" के रूप में
- मानव में चैतन्य पक्ष की समझ: "जीवन ज्ञान" के रूप में, एवं
- मानवीय प्रयोजन, निश्चित मानवीय आचरण का समझ (मानव-मानव संबंध एवं मानव-शेष प्रकृति संबंध): "मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान" के रूप में

आवश्यक है| ऐसे **ज्ञान** के फलन में मानव लक्ष्य "**विवेक**" के रूप में स्पष्ट होता है, एवं इस लक्ष्य के लिए दिशा निर्धारित करने के रूप में विवेक सम्मत **विज्ञान** स्पष्ट होता है| इस प्रकार प्रत्येक मानव विकसित चेतना में जीते हुए समझदारी-समाधान संपन्न होता है, एवं स्वयं में सुखी, सामंजस्य में रहता है, और मानव-मानव संबंध एवं मानव-शेष प्रकृति संबंध में भी पूरकता सुनिश्चित कर पाता है, इसके लिए स्रोत बनता है| ऐसा 'समझ' या ज्ञान एक से अनेक व्यक्तियों में प्रसारित होने की विधि को पाया गया है, एवं क्रियान्वित किया गया है| यह "अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिंतन" विधि से आया है, जिससे मानव को 'ज्ञानावस्था' की इकाई होने की पहचान किया एवं कराया है | जबकि, प्रचलित विज्ञान (भौतिकवाद) अस्थिरता-अनिश्चितता मूलक भौतिक रासायनिक विचार है – इसमें मानव का अध्ययन पूर्णतया छूटा है; एवं आदर्शवादी* चिंतन विधि रहस्य मूलक ईशवर केंद्रित है, जिससे भी मानव का अध्ययन हो नहीं पाया| दोनों विचारधाराओं में मानव को 'जीव' ही कहा गया है| फलत: वर्तमान तक मानव अपने स्वभाव एवं प्रयोजन के प्रति अज्ञात है| *s<[*आदर्श द = आध्यात्मवा , अधिदैवीवा , अधिभौतिकवा*

आज के मानव समस्याओं का कारण

हम जो वास्तव में चाहते है, वह अस्तित्व में उपलब्ध है| मानव का होना अस्तित्व के किसी भी इकाई के विरुद्धता में नहीं है| अस्तित्व स्वयं सहअस्तित्व है, उसमे सामंजस्य, व्यवस्था निहित है | इस व्यवस्था को 'बनाना' नहीं है| इस व्यवस्था में रहने के लिए हमें मात्र उसे 'जैसे है, वैसे' समझना है| मानव के अलावा प्रत्येक इकाई अपने त्व-सहित व्यवस्था है, समग्र व्यवस्था में भागीदार है| मानव भी ऐसे होना चाहता है; समझदारी या ज्ञान पूर्वक हो पाता है| प्रत्येक मानव समझना चाहता है, समझ सकता है| **समझ या ज्ञान मानव की मूलभूत आवश्यकता है – मानव 'ज्ञानावस्था' की इकाई है** | अस्तित्व में मानव ही दृष्टा, कर्ता, भोक्ता है| आज तक मानव ने अपने कल्पनाशीलता एवं कर्मस्वतंत्रता का प्रयोग किया, जिससे मनाकार साकार हुआ है| मनाकार साकार होने की विधि: 'कर्म करते समय स्वतंत्र' एवं 'फल भोगते समय परतंत्र' रहा है| जबकि मन-स्वस्थता का भाग अभी बिरान पड़ा है, इसी की अपेक्षा है|

वास्तविकता को समझने से यह ज्ञात होता है की प्रत्येक इकाई के चार आयाम है: रूप, गुण, स्वभाव एवं धर्म| 'रूप' का तात्पर्य आकार-आयतन-घन से है| 'गुण' का तात्पर्य सम-विषम-मध्यस्थ कार्यों के रूप में है (अथवा, परस्पर प्रभाव)| 'स्वभाव' – प्रयोजन या भागीदारी को इंगित करता है, यही 'मूल्य' है; एवं 'धर्म' का तात्पर्य 'धारणा' से है जो उस इकाई के 'व्यवस्था में होने' को इंगित करता है| धारणा ही धर्म है, अथवा जिससे जिसका वियोग संभव नहीं है, वही उसका धर्म है| रूप एवं गुण इकाई के स्तर पर बदलते है, जबकि स्वभाव एवं धर्म अवस्था के स्तर पर एक ही है| अत: किसी भी अवस्था (पदार्थ, प्राण, जीव, ज्ञान) में सभी इकाइयों का स्वभाव एवं धर्म एक ही है| रूप एवं गुण वास्तविकता के वह आयाम है जिसमे लम्बाई-चौड़ाई-ऊँचाई है एवं इनका अधिकांश भाग ५ ज्ञानइन्द्रियों के माध्यम से ज्ञात होता है, जबकि स्वभाव, एवं धर्म ज्ञानइन्द्रियों में आते नहीं, परन्तु यह समझ में आते है| इस प्रकार, रूप एवं गुण सापेक्ष है एवं समय एवं परस्परता के साथ परिवर्तित होते है, जबकि स्वभाव एवं धर्म, निरपेक्ष है, समय अथवा परस्परता के साथ इनमे कोई परिवर्तन नहीं होता| इसीलिए इकाइयां, अथवा प्रकृति (मानव, जीव, प्राण, पदार्थ) के अध्ययन के लिए इन चारों आयामों (रूप-गुण-स्वभाव-धर्म) को समझना होगा| इकाई के इन चारों आयाम मिलकर *Δ'वास्तविकता* है, एवं उनका व्यापक (शून्य, आकाश) के साथ संबंध '*सत्य*' है|

'कल्पनाशीलता' के सीमा में रहते हुए, चैतन्य पक्ष ('जीवन') के बल-शक्तियों का आंशिक भाग (१० में से ४.५ क्रियाएँ) ही मानव ने प्रयोग किया, जिससे उसका 'समझ' अथवा 'ज्ञान', "रूप-गुण" के आयामों तक सीमित रह गया – अत: अपूर्ण रह गया: प्रचलित'विज्ञान' इसी सीमा में कार्यरत है| ऐसे 'रूप-गुण' के सीमा में रहते हुए सच्चाई एवं मानव को गणितीय-यांत्रिक विधि से समझने का प्रयास किया है, जो सफल हो नहीं सकता है – क्योंकि **गणित 'आँखों से अधिक एवं समझ से कम है'**| गणित, विश्लेषण एवं तर्क:- सच्चाई के कुछ ही आयामों तक पहुँच सकते है, क्योंकि यह मानव में चैतन्य पक्ष (जीवन) के कुछ ही क्रियाएँ है| इस विधि से सच्चाई के निरंतर रहने वाले आयामों: जैसे 'स्वभाव या प्रयोजन'; 'धर्म या व्यवस्था' एवं 'सत्य या महाकारण' तक पहुंचा नहीं जा सकता है | दुसरे भाषा में, 'यथार्थता-वास्तविकता-सत्यता' को जब हम चैतन्यता के मात्र आंशिक भाग के प्रयोग से समझने जाते है तो अलग-अलग उत्तर मिलते है, क्योंकि चेतना के इस स्तर (जीव चेतना) से इतना ही संभव है| इसका तात्पर्य मानव अध्ययन मात्र 'रूप एवं गुण' का करता है, परन्तु भाषा /कल्पना रूप में निष्कर्ष 'स्वभाव, धर्म एवं सत्य' का निकाल लेता है| अत: इस विधि से 'यथार्थता-वास्तविकता-सत्यता' पर निष्कर्ष मात्र मान्यता, भ्रम, अपूर्ण सिद्ध होते है| यही जीव-चेतना में जीने का तात्पर्य है, जिसके फलस्वरूप मानव अपराध करता है, एवं शुभ की चाहत व्यक्त करता है और अपने *रूप एवं गुण* के आधार पर अपना कुछ *स्वभाव-धर्म* माने रहता है| यही वर्तमान में मानव में पाए जाने वाले वैविध्यता का कारण है|

इस स्थिति में रहते, शुभ की चाहत वश मानव गलतियों एवं समस्याओं के विश्लेषण, अध्ययन से समाधान को पाने के प्रयास में है, जो संभव नहीं है, क्योंकि समाधान के रोशनी में ही समस्या समीक्षित होती है | समस्याओं के विश्लेषण से भ्रम का ही विस्तार बनता जाता है, एवं समस्याएं बढ़ती जाती है जटिल होते जाते है, जिसके जंजाल में मानव फस जाते है – आज मानव समाज की स्थिति इसके लिए पर्याप्त गवाही है| समस्याओं के बारे में समाचार फैलाना, अपने में कोई 'समाधान' नहीं है, न ही समाधान की आवश्यकता को व्यक्त करना कोई समाधान है | 'समाधान' का तात्पर्य अस्तित्व में वास्तविकताओं की पूर्ण समझ से है| किसी भी घटना अथवा क्रिया के नियम की समझ का होना ही समाधान है, अथवा कैसे और क्यों की पूर्ति ही समाधान है| समाधान ही 'होना' है| समाधान के अभाव में ही सम्पूर्ण समस्याएं है|

समस्याओं का हल: समाधान

मानव के अलावा प्रकृति के शेष ३ अवस्थाएं (पदार्थ, प्राण, जीव) अपने अपने स्वभाव – धर्म अनुसार गुण एवं रूप सहित है, जबकि मानव अपने स्वभाव-धर्म अनुसार नहीं है| चैतन्य पक्ष ("जीवन") के सभी बल-शक्तियों (१० क्रियाएं) के प्रयोग से, विकसित चेतना विधि से ही 'स्वभाव', 'धर्म' एवं 'सत्य'(सहअस्तित्व) समझ में आता है: जिससे अस्तित्व सम्पूर्ण की समझ, चैतन्य पक्ष की समझ एवं मानव प्रयोजन रूपी मानवीय आचरण (स्वभाव, धर्म) की समझ पूरा होता है| ऐसा 'समझ' निरपेक्ष एवं महाकारण का है; इसके विपरीत जीव चेतना में जीते हुए 'समझ' सापेक्ष कार्य – कारण सिद्ध होता है| ऐसे समझ के साथ जीने पर ही मानव अपने स्वभाव को धीरता, वीरता, उदारता एवं दया, कृपा, करुणा के रूप में जान पाता है, समझ पाता है, स्वीकार पाता है; जबकि जीव चेतना में जीता हुआ मानव का स्वभाव दीनता, हीनता, क्रूरता है, जो किसी एक को भी स्वीकार होता नहीं|

ऐसे समझ या ज्ञान के साथ जीने पर ही मानव अपने में सामंजस्य में होता है, यही सुख-शांति है, एवं प्रत्येक संबंधों में पूरकता विधि से जी पाता है जो स्वयं न्याय है, जिससे ही समाज की अखंडता एवं व्यवस्था की सार्वभौमता उपयोगिता-पूरकता के रूप में प्रमाणित होता है| यही विकसित चेतना, अथवा मानव चेतना, अथवा समाधान पूर्वक जीने का तात्पर्य है, जो शेष ३ अवस्थाओं के साथ जीने में नियम-नियंत्रण-संतुलन के रूप में प्रमाणित होता है एवं मानव के साथ जीने में न्याय-धर्म-सत्य के रूप में प्रमाणित होता है| प्रत्येक मानव

के लिए ऐसे जीना संभव है| हममें से प्रत्येक व्यक्ति यह निर्णय ले सकते है, कि हमें कैसे होना है, कैसे रहना है|

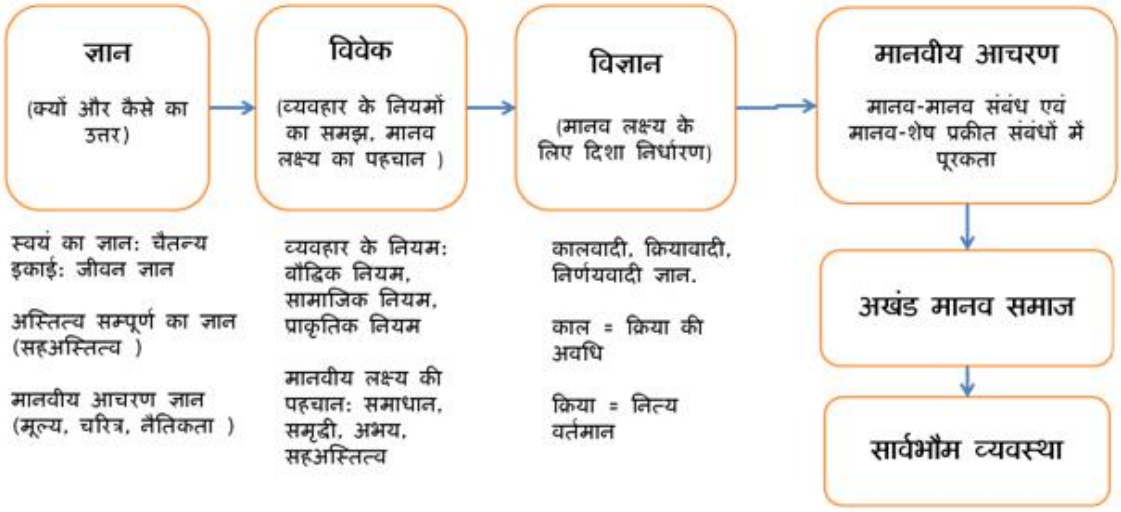

<u>निष्कर्ष</u>

अब हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते है की 'समझ' "रूप-गुण" के स्तर पर सीमित रहते प्रत्येक मानव अलग लगता है, वास्तविकता सब का अपना अपना लगता है, परन्तु स्वभाव-धर्म-सत्य के समझ से सभी मानवों में स्वभाव-धर्म एक ही है, वास्तविकता-सत्यता एक ही है, यह समझ में आता है| अत: प्रत्येक मानव का स्वभाव: उसके प्रयोजन, अस्तित्व में भागीदारी के रूप में एक ही है, एवं हर मानव सुख धर्मी है, समाधान ही मानव धर्म है, यह मानवों में परस्पर समानता, सुख-शांति का आधार बनता है| शरीर के रचना, कार्यरूप से मानव जाति एक एवं समझ-सुख के आधार पर मानव धर्म एक है, यह सिद्ध होता है| ऐसे 'समझ'-ज्ञान के लिए अध्ययन आवश्यक है|

सारांश:

स्वयं या 'जीवन' में १० क्रियाएं = ज्ञान = समझ = समाधान= सुख, शांती, सामंजस्यता = अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था

स्वयं या 'जीवन' में ४.५ क्रियाएं = अज्ञान =भ्रम =समस्या = दु:ख, अशांती, असमंजस्यता = समुदायवाद, संघर्ष-युद्ध

अनुसंधान पूर्वक, अस्तित्व में अनुभव विधि से पाई गयी इस पूरी बात को १२ पुस्तकों के रूप में लिखा गया है| इसमें दर्शन में ४ भाग: मानव व्यवहार दर्शन, मानव कर्म दर्शन, मानव अनुभव दर्शन एवं मानव अभ्यास दर्शन है| यह 'समझ' विचार-तर्क में विश्लेषित होकर वाद रूप में ३ भाग है: समाधानात्मक भौतिकवाद, व्यवहारात्मक जनवाद एवं अनुभवात्मक आध्यात्मवाद है| जो विचार में आया, जीने में प्रमाणित होता है: शास्त्र रूप में ३ भाग: व्यवहारवादी समाजशास्त्र, आवर्तनशील अर्थशास्त्र एवं मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान

है| और मानवीय अचार संहिता रूपी मानवीय संविधान सूत्र व्याख्या है| इसे भारत में कुछ शिक्षण संस्थाएं एवं सैकड़ों लोग गंभीरता पूर्वक अध्ययन कर रहे है |

जब तक व्यक्तिवादी एवं समुदायवादी मानसिकता है, तब तक भोग, एवं युद्ध-संघर्ष रहेगा ही, एवं विश्व शांति संभव नहीं है| मानव को यदि इस धरती पर रहना है, तो अपराध और भ्रम से मुक्त होना ही पड़ेगा, ताकि धरती पुनहः अपने संतुलन को पा ले| इसके लिए चेतना-विकास को शिक्षा विधि में लाना ही पड़ेगा| इसके लिए 'विकल्प' को अपनाना ही पड़ेगा| यह विकल्प नियति सहज विधि से सर्व मानव सम्मुख एक व्यक्ति द्वारा प्रकट हुआ है| इस लेख (*'अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था के लिए एक विकल्पात्मक प्रस्ताव'*) की मोटी रूप-रेखा श्री ए नागराज ने दिया, मैंने इसे हिंदी में लिखा है | इस लेख के लिए मैं जिम्मेदार हूँ| श्री ए नागराजजी के प्रतिपादन हेतु उनका लिखा हुआ 'मध्यस्थ दर्शन' वांगय उपलब्ध है, अपने अध्ययन के लिए उसी को देखें |

- श्रीराम नरसिम्हन ०३ जनवरी, २०१२

व्यक्तिगत जानकारी:

श्रीराम नरसिम्हन - मूलत: तमिल नाडू के रहने वाले, पुणे निवासी, वहीं से इंगिनीएरिंग शिक्षा प्राप्त| ८ वर्ष कंप्यूटर कंपनी (फुजित्सु, जेनसर, रोबर्ट बोष) में नौकरी किया|

गौरी श्रीहरी - मूलत: मैसोर के रहने वाले, वहीं से एम्.एस.सी शिक्षा प्राप्त| हिन्दुस्तान लीवर कंपनी में नौकरी किया|

** गौरी और श्रीराम पिछले १.५ वर्षों से मध्यस्थ दर्शन के अध्ययन, संबोधन में पूरे समय लागाएं हैं| इस दर्शन में उनके सभी प्रश्नों का उत्तर है, एवं सभी मानवों के लिए यही समाधान हैं, सर्व शुभ के लिए रास्ता हैं, ऐसा उन्हें स्पष्ट हुआ है| आगे इसी को समझने, जीने, समझाने का मन बनाया हैं| वर्तमान में कानपुर में 'मानव मंदिर' – नामक मध्यस्थ दर्शन के अध्ययन स्थली में रहते हैं| आज तक जिस किसी से भी समझने के यात्रा में सहायता मिली हो, उन सभी का आभार|*

संपर्क: gowrisrihari@gmail.com | zshriram@gmail.com

दर्शन हेतु अधिक जानकारी के लिए - www.jvidya.com देखें